Chap-2

द्वितीय अध्याय

परिवार को प्रभावित करने वाले पक्ष

परिवार समाज की महत्वपूर्ण एवं आधारभूत इकाई है । जन्म लेते ही बालक परिवार का सदस्य बन जाता है, जहाँ उसका पालन- पोषण होता है तथा सामाजिक गुणों के समुचित विकास का पथ प्रशस्त होता है । इस प्रकार बालक, युवा अथवा वृद्ध सभी मनुष्य किसी न किसी रूप में परिवार से सम्बद्ध रहते हैं । अत: परिवार एक ऐसी सार्वभौमिक सार्वकालिक संस्था है जिसमें सामान्य निवास, आर्थिक सहयोग तथा प्रजनन आदि विशेषतायें मिलती हैं। यहाँ समाज-स्वीकृत यौन-सम्बंध सहज उपलब्ध है। दूसरा उल्लेखनीय तथ्य यह है कि परिवार आदर्शात्मक आवरण द्वारा एक दूसरे से बाह्यत: सम्बंधित होते हैं। आन्तरिक रूप में उसके सभी सदस्य परस्पर उत्तरदायी एवं सुसम्बद्ध रहते हैं । एक दूसरे के प्रति उत्सर्ग की भावना, जो पारिवारिक जीवन मूल्यों के आदर्शात्मक पक्ष का निर्माण करती है, परिवारों को अनुशासित करती तथा सद्वृत्तियों को जाग्रत करती है। अत: यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति पर परिवार के वातावरण का जितना गहरा प्रभाव पड़ता है उतना अन्य किसी सामाजिक संस्था का नहीं । इसी कारण व्यक्तित्व के विकास में पारिवारिक परिवेश को अत्यंत महत्वपूर्ण एवं सशक्त संस्था के रूप में माना जाता है । इस पारिवारिक संस्था पर अनेक विचारों तथा पक्षों का प्रभाव समय-समय पड़ता रहता है जिन पर यहां संक्षेप में विचार कर लेना आवश्यक है । ये पक्ष मुख्यत: इस प्रकार हैं -

१- वैवाहिक संस्था

२- मनोविज्ञान

जिन पर यहां क्रमश: विचार किया जा रहा है ।

१- वैवाहिक संस्था :

पारिवारिक जीवन का आरंभ दाम्पत्य जीवन से होता है जिसका महत्वपूर्ण संस्कार विवाह है। भारतीय संस्कृति में विवाह का मुख्य लक्ष्य इंद्रियों की तृप्ति तथा भौतिक सुख तक ही सीमित न रहकर पारिवारिक सुख का आधार आध्यात्मिक उत्कर्ष तथा सामाजिक परंपरा के प्रति दायित्व निर्वाह है।[१] स्त्री- पुरुष की यौन-सम्बंधी आवश्यकताओं को समुचित रूप देने, नियंत्रित रखने तथा परिवार को स्थायी रूप देने के लिए यही संस्था उत्तरदायी है। अत: कहा जा सकता है कि विवाह स्त्री- पुरुष को पारिवारिक जीवन में प्रवेश करवाने की एक ऐसी संस्था है, जो आदिम, सभ्य, असभ्य सभी समाजों की संस्कृति का एक आवश्यक अंग मानी जाती है।[२]

विवाह के तीन प्रमुख उद्देश्य माने जाते हैं। प्रथम-यौन सम्बंधी इच्छाओं की तृप्ति, द्वितीय- आर्थिक सहयोग। तृतीयत: - सन्तान प्राप्ति तथा बच्चों का पालन- पोषण।[३] मनु स्मृति में आठ प्रकार के विवाह वर्णित हैं, जिनमें प्रथम चार-ब्राह्म विवाह, दैव विवाह, आर्ष (ऋषि) विवाह, प्रजापत्य विवाह को श्रेष्ठ तथा असुर विवाह, गान्धर्व विवाह, राक्षस विवाह और पैसाच विवाह को निकृष्ट माना गया है।[४] आज के समाज में ब्राह्म विवाह का परिष्कृत रूप ही सर्वत्र विद्यमान है। डॉ० मजूमदार के मतानुसार यद्यपि आज के समय में ब्राह्म विवाह उच्च जाति के लोगों में तथा असुर विवाह निम्न जाति के लोगों में प्रचलित है, तथापि असुर विवाह उच्च जाति के लोगों में अपवाद रूप में मिलता है।[५] इसके अतिरिक्त आधुनिक समय में गान्धर्व विवाह के लोकप्रिय रूप प्रेम- विवाह का प्रचलन अधिक होता जा रहा है। आज के भारतीय समाज के

सन्दर्भ में विचार करें तो अधिकांशत: विवाह सम्बन्धों के दो रूप दिखायी पड़ते हैं - एक तो माता- पिता या संरक्षकों द्वारा निश्चित किये गये तथा दूसरे प्रेम -विवाह । इसके अतिरिक्त चयन के निर्धारण में इन दोनों का समन्वित रूप भी दृष्टिगोचर होता है जिसमें प्रेम-विवाह भले ही न हो किन्तु विवाह योग्य लड़के-लड़कियों की रुचि- अरुचि को भी समाज महत्व देने लगा है । प्रथम प्रकार के विवाह सम्बन्धों में प्राय: अनमेल या अनुपयुक्त विवाह- सम्बन्ध भी देखे जाते हैं जो दहेज-प्रथा या ऐसी ही अनेक विकृतियों के परिणाम कहे जा सकते हैं। यदि यह न भी हो तो भी पीढ़ी का अन्तराल चयन तथा रुचि की भिन्नता के लिए उत्तरदायी हो सकता है। इसी प्रकार प्रेम- विवाह के शुभ-अशुभ दोनों परिणाम होते हैं । दोनों के संतुलित निर्णय के जहाँ अच्छे परिणाम तथा सामंजस्य एवं संतुलन के उदाहरण दिखायी पड़ते हैं वहां ऐन्द्रिय आकर्षण या यौन- सम्बंधों के परिणाम-स्वरूप सम्पन्न होने वाले विवाह कालान्तर में तनाव, संघर्ष तथा परस्पर असंतोष आदि का भी पथ प्रशस्त करते हैं । अभिभावकों द्वारा विवाह योग्य युग्मों की रुचि या सामंजस्य से होने वाले विवाह दो भिन्न स्थितियों के परिणाम होते हैं । जहाँ अभिभावकों के प्रथम निर्णय के पश्चात् युग्मों के भी दृष्टिकोण को स्वीकार किया जाता है, वहाँ चयन का क्षेत्र उनके लिए सीमित होता है । सम्भाव्य प्रेम सम्बंधों या युग्मों के अन्य आकर्षणों के कारण अभिभावकों की विवशता भरी स्वीकृति ऐसे विवाह सम्बंधों का दूसरा रूप कहा जा सकता है । ये दोनों स्थितियाँ भी पारिवारिक जीवन के भावी रूपों, सन्दर्भों, विश्रृंखलताओं तथा सामंजस्य पूर्ण दृश्यों को पूर्णतया प्रभावित करते हैं । अत: स्पष्ट है कि पारिवारिक जीवन को प्रभावित करने में विवाह संस्थाओं का योगदान रहता है ।

इसके साथ ही यह भी उल्लेखनीय है कि विवाह के आज प्रचलित विविध रूपों और सम्बंधों की अनेक विध आधारभूमियों के कारण अनेक मनोवैज्ञानिक कारण अपने - आप विकसित हो चलते हैं। इस अनिवार्य परिणाम के साथ ही व्यक्ति और समाज का मनोविज्ञान भी उनको दुहरे रूप में प्रभावित करता है। अत: पारिवारिक जीवन में मनोवैज्ञानिक कारणों की क्रियाशीलता स्वयं सिद्ध है। जिसके सम्यक् मूल्यांकन के लिए एतद्विषयक मनोविज्ञान पर विचार कर लेना प्रासंगिक ही होगा।

२-मनोविज्ञान :

आज मानव की जिज्ञासा 'क्या' से अधिक 'क्यों' की है। वह व्यक्ति और समाज को आन्तरिक रूप से देखने का आकांक्षी रहता है। ऐसा 'क्यों' है ? 'कैसे' हुआ ? का समाधान मनोविज्ञान कराता है। अत: मनोविज्ञान का व्यावहारिक अनुशीलन ही जीवन में प्रस्तुत होता है;[६] जिसका मूल उद्देश्य मनुष्य के प्रतिबिम्ब एवं वस्तुपरक यथार्थता के सन्दर्भों को परिभाषित करना तथा व्यक्ति के विचारों, अनुभूतियों, आदतों तथा उनके प्रभावों का अध्ययन करना है।[७] हम व्यक्ति और उसके परिवेश के सम्बंध में गतिशील अवस्था में देखते हैं।[८] व्यक्ति की यही आत्मकेन्द्रीकरण तक अति-आत्मोन्मुखता (Ego - Centreness) की प्रवृत्ति आगे चल कर परिवार को विघटित करने में महत्वपूर्ण योगदान देती है, जिसके कारणों पर आगे विस्तार से विचार किया जा रहा है। यह उल्लेखनीय है कि एक और परिवार व्यक्ति संगठन द्वारा सदस्यों को सुखमय और भय-बाधा रहित बनाने का प्रयत्न

करता है तो दूसरी ओर व्यक्ति की आत्मोन्मुखता तथा वैयक्तिकता को सामाजिक दायित्व को सामंजस्यपूर्ण करता है जो प्रधान बन कर इस संगठन को घात- विघात कर सकती है। आज की नारी अपने अस्तित्व की सार्थकता प्रदान करने के साथ ही विवाह को स्वीकारना चाहती है । पुरुष भी आज के परिवेश के अनुरूप नारी को पत्नी रूप में प्राप्त कर गौरवान्वित होता है तथा अनुभव करता है कि नारी केवल भोग्या तथा परिचारिका के रूपों तथा कुल धर्म का अन्धानुसरण या परिवहन करने वाली ही न रहकर एक समर्थ बौद्धिक सहचारिणी भी हो गयी है । जब कभी पुरुष की उन्मुक्त अहं भावना को अचेतन रूप में नारी का अहं स्वीकार नहीं करता तब तद्गत अन्तश्चेतना विरोध या विद्रोह करती है जिससे मानसिक द्वन्द्व प्रारंभ होता है । दूसरी ओर अपने ही अनुसार परिवार को चलाने की आकांक्षा रखने वाली नारी के प्रति पुरुष का भी विद्रोह होता है । इस प्रकार आज मनोविज्ञान व्यवहार की उस वैज्ञानिक जांच से सम्बंधित है जिसमें व्यवहार के दृष्टिकोण में वह सब कुछ निहित है जिसे प्रारम्भ में मात्र अनुभव के रूप में लिया जाता था ।[९]

मनोविज्ञान का विश्लेष्य मानव मन होता है । इन मनोभवों का आश्रय, मनोविकारों का स्रोत तथा अनुभूतियों का कोष है जो परिवार के सदस्यों की क्रियाओं का विज्ञान है ।[१०] इस प्रकार मनोविज्ञान का आधार मनोविकार है जिन पर मानवीय विकास आधारित है । अतः कहा जा सकता है कि मनोविज्ञान व मानवीय जीवन में साधन व साध्य की भाँति अविच्छिन्न सम्बंध है । जिसे हम जीवन कहते हैं वह अधिकांशतः हमारे मनोजगत की सूक्ष्मता

की वस्तुस्थिति है ।[११] मनोविज्ञान ने धर्म तथा सामाजिक संस्थाओं का सूक्ष्म विश्लेषण कर स्पष्ट कर दिया है कि समाज व्यक्ति पर अनेक प्रतिबन्ध लगाता है जिसके प्रति व्यक्ति का विद्रोह सर्वत्र प्रतिलक्षित होता है । परिवार के संगठन में भी मनोविज्ञान के गति-शास्त्र का विश्लेषण अधिक महत्व रखता है , जिसके अनुसार माता- पिता के आपस के सम्बंध भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने कि उनके बालक से सम्बंध ।[१२] लड़के तथा लड़की का दृष्टिकोण माता-पिता के प्रति भिन्न रहता है । फ्रायड के मतानुसार लड़के का प्रेम माता के प्रति अधिक होता है और पिता उसके समक्ष प्रेम तथा द्वेष की परस्पर विरोधी भावना के साथ प्रतिद्वन्द्वी रूप में आता है । इसी प्रकार एक ओर लड़की पिता से अधिक प्रेम करती है तो दूसरी ओर माता से तादात्म्य स्थापित करती चलती है ।[१३] शैशवकाल के मानसिक विकास में लड़कों में ओडिपस ग्रंथि(Oedipus Gland) तथा लड़कियों में इलैक्ट्रा(Electra) ग्रंथियाँ, पुंसत्वहरण(Castration Complex)[१४] तथा लिंग-ईर्ष्या (Penis Envy)[१५] आदि मानसिक ग्रंथियों को अधिक महत्व दिया गया है । परिवार में लड़कों की अपेक्षा लड़की के सम्बंध अधिक जटिल तथा सुदृढ़ माने जाते हैं । जिस परिवार में बालक अधिक होते हैं वहाँ परस्पर प्रतिद्वन्द्विता और ईर्ष्या (Sibling Rivalry) की मात्रा अधिक होती है । अतः परिवार व्यक्तिगत मनोविज्ञान तथा समाज मनोविज्ञान दोनों से पूर्ण रूप से प्रभावित होता है ।[१६]

व्यक्तित्व की संरचना में तीन मनोवैज्ञानिक तत्व मुख्य रूप से कार्य करते हैं । इड(Id), इगो(Ego), तथा सुपर इगो(Super- Ego)

मनुष्य की समस्त कुंठाएँ तथा दमित आकांक्षाएँ अनायास अचेतन में चली जाती हैं और अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त अवसर खोजती रहती हैं । इनमें अधिकांशत: आकांक्षाएँ काम सम्बंधी होती हैं जिनके मूल में एक काम शक्ति होती है जिसे लिबिडो कहा जाता है ।[१७] लिबिडो के द्वारा काम-सम्बंधी उत्तेजना के परि-वेश की प्रक्रियाओं तथा परिवर्तनों को मापा जा सकता है ।[१८] यह शक्ति कामोत्तेजित होने वाले अंगों में ही उत्पन्न होती है । शरीर में इस प्रकार के अनेक अंग हैं । अत: लिबिडो के भी अनेक स्रोत माने जाते हैं जो जननेन्द्रियों से स्रावित हारमोन द्वारा प्रेरित होते हैं । युंग के मत से 'लिबिडो' काम-शक्ति का पर्यायवाची नहीं है । यह वास्तव में एक 'मानसिक शक्ति' है जिसके द्वारा व्यक्ति की प्रत्येक वर्ग की क्रियाएँ संचालित होती हैं । यह एक ऐसी शक्ति है जिसका प्रवाह कई दिशाओं में हो सकता है । जिस व्यक्ति में जिस प्रवृत्ति की प्रधानता रहती है, उसी दिशा में उसकी मानसिक शक्ति का विशेष प्रवाह होता है। किसी व्यक्ति के चरित्र और व्यक्तित्व के प्रकार का निर्धारण इस आधार पर होता है कि उसकी 'मानसिक शक्ति' के प्रवाह का रुख किस ओर है ।[१९] अत: कहा जा सकता है कि यह जीवन की ऐसी प्रेरक शक्ति है जिसमें मानव की अचेतन, अन्तरंग मूल प्रवृत्तियों, अतृप्त इच्छाओं तथा दमित अनुभूतियों व कुंठाओं का भंडार रहता है । जब यह अचेतन शक्ति मानव की प्रेरक शक्ति बनकर अवचेतन में विशेष इच्छाओं का आधार बनती है तब उसका प्रभाव चेतन जीवन में अप्रत्यक्ष रूप से पड़ता है । इसे 'इड' माना जाता है । जब यह शक्ति मानव की अहं भावना बन कर चेतन जीवन के संपर्क में आती है तब 'इगो' नाम दिया जाता है। इस प्रकार अहं (इगो) अचेतन (इड) के सुख की खोज चेतन जगत में करता है । जब मानव को अभीष्ट वस्तु प्राप्त नहीं हो पाती, तब अभीष्ट वस्तु की प्रतिमा

उसके मानसिक जगत में कल्पनाओं के रूप में प्रतिष्ठित हो जाती है और मानव परिवेश से तादात्म्य करने का प्रयत्न करता है जिसे अहं का आदर्श रूप श्रेष्ठ - अहं(Super- Ego) कहा जाता है । इसमें अवचेतन और चेतन मन का एक प्रकार से समझौता होता है। युंग के अनुसार कला और साहित्य का - निर्माण भी इसी के द्वारा होता है । साहित्य की जन्मदात्री यही मनोवृत्ति मानी जाती है , क्योंकि साहित्य एक अभिव्यक्त स्वप्न मात्र है । साहित्यकार की कुंठाएँ जो उसके जीवन में लगी नैतिकता के अंकुश के कारण अभिव्यक्त नहीं हो पातीं, वे शब्दों की झिलमिल तूलिका के प्रदर्शन से अंकित हो जाती हैं। अत: युंग के अनुसार 'कला दमित कुंठाओं एवं वासनाओं का श्रेष्ठ अहं द्वारा किया हुआ वह आदर्श रूप है जिसमें इच्छाएँ समाज से समझौता करने के लिए रूप बदल कर उपस्थित होती हैं । यह उदात्तीकरण(Sublimation) कहलाता है ।'[२०]

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार कुंठाग्रस्त भावनाएँ तथा आकांक्षाएँ जितनी अधिक अवचेतन में होगीं प्रतीक रूप में प्रकट होकर वह उतनी ही सफल कविता, कहानी, भावचित्र या छायाचित्रों को अभिव्यक्ति देंगी। अत: सफल साहित्यकार एक प्रकार से कुंठाग्रस्त मानव है जिसके श्रेष्ठ अहं का उदात्तीकरण होकर उसमें चेतन के साथ सामंजस्य स्थापित होता है ।[२१] श्रेष्ठ अहं, अहं को निर्देश देता है कि उसे क्या करना चाहिए ? क्या नहीं करना चाहिए ? ये निर्देश व्यावहारिक आवश्यकता पर आधारित न होकर निरपेक्ष आन्तरिक जगत से लिए हुए होते हैं ।[२२] इसी मानसिक शक्ति के कारण मानव के चेतन, अचेतन तथा नैतिक अहम् के मध्य सदा अन्तर्द्वन्द्व होता रहता है । ऐसी प्रवृत्तियाँ

विचार या इच्छाएँ जो व्यक्ति के आदर्शों के प्रतिकूल होती है व्यक्ति के चेतन मन में समाज व नैतिकता के अंकुश से उनका दमन होता है तथा व्यक्ति मानसिक दौर्बल्य से पीड़ित हो जाता है और उसके व्यवहार में परिवर्तन आता है यही परिवर्तन उसके पारिवारिक जीवन को भी पूर्ण रूप से प्रभावित करता है। इन्हीं के परिणाम से एक ओर दाम्पत्य जीवन आदर्श अहं से प्रेरित होकर उच्च स्थिति या सुखी जीवन बनाता है तो कहीं- कहीं परिवार विघटन के कगार पर आकर खड़ा हो जाता है। ऐसी स्थिति में कहीं पत्नी-पति को छोड़ अन्य पुरुष कीकामना करती है तो कहीं पति-पत्नी के अतिरिक्त अन्य स्त्री को प्रेम करता है। तनाव व द्वन्द्व की अनचाही प्रवृत्ति परिवार में बनने लगती है और पारिवारिक जीवन बिखरने लगता है। पारिवारिक जीवन की इस विशेष स्थिति को केवल सामान्य मनोविज्ञान द्वारा ही नहीं लक्ष्य किया जा सकता। इसके लिए स्वतंत्र नारी मनोविज्ञान को भी दृष्टिगत कर लेना यहाँ आवश्यक प्रतीत होता है।

(क) स्वतंत्र नारी-मनोविज्ञान :

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने पर ज्ञात होता है कि पुरुष एवं नारी उपलब्धि (Achievement), प्रवणता(Aptitude) रुचि(Interest), व्यक्तित्व(Personality) आदि दृष्टिकोणों से भिन्न होते हैं।[२३] इस प्रकार स्त्री- पुरुष के क्रमशः धैर्ययुक्त (Passive) व प्रभुत्वप्रिय(Ascentent) दो पृथक समूह बन गये हैं।[२४] स्त्री की आयु अधिक हो अथवा कम, वह सैक्स से सम्बंधित चर्चाओं से अधिक व्यथित रहती है। पुरुषत्व के अभाव में अनेक स्त्रियों में मानसिक

रुग्णता तक आने की संभावना रहती है ।[२५] इस रुग्णता के कारण उनके यौन सन्तोष में भी अन्तर रहता है । पुरुष अपनी शारीरिक रचना के आधार पर अधिक मानसिक शक्ति रखता है जबकि स्त्री की स्थिति इसके विपरीत होती है ।[२६] ये परिस्थितियाँ उनकी मानसिकता में अन्तर लाती हैं । इसीलिए मनोचिकित्सक व मनोवैज्ञानिक शारीरिक भिन्नता को ही स्त्री और पुरुष की पृथक-पृथक मानसिक स्थितियों का कारण मानते हैं ।[२७] पूर्ववर्ती विवेचन में कहा जा चुका है कि पुरुष प्रभुत्वप्रिय या क्रियाशील तथा स्त्री धैर्ययुक्त या क्रियाहीन मानी जाती है । अत: पुरुष प्रताड़ित करता है, स्त्री प्रताड़ित होती है । पुरुष दूसरे को कष्ट देकर स्वयं आनन्द अनुभव करता है जबकि स्त्री स्वयं को कष्ट देकर आनंदित होती है ।[२८] इन समस्त क्रियाओं को नारी के अवयव संगठन की नियति का एक भाग माना जाता है ।[२९] अत: कहा जा सकता है कि पुरुष मनोविज्ञान की अपेक्षा स्त्री- मनोविज्ञान अधिक जटिल एवं पृथक है ।[३०]

मनोविज्ञान स्पष्ट करता है कि व्यक्ति की सामाजिक, पारिवारिक एवं व्यक्तिगत स्थितियाँ भी उसके व्यक्तित्व की विकृतियों के लिए उत्तरदायी होती हैं । आज के समय में नारी का दृष्टिकोण तथा मन बदल चुका है उसकी आकांक्षाएँ परिवर्तित होती जा रही हैं । वह एक ओर विज्ञापनों की आधार-शिला बनती है तो दूसरी ओर राज्य सत्ता को प्रभावित करने तथा उस पर नियंत्रण करने की आकांक्षिणी है । एक ओर पुरुष उस पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करता है तो दूसरी ओर उसका शोषण भी करता है । इस कारण वह आज पुरुष की सम्पूरक या जीवन संगिनी के साथ-साथ उसकी प्रतिद्वन्द्वी

भी बनती जा रही है । अत: संक्षेप में कहा जा सकता है कि सभी मानवीय अभिव्यक्तियाँ एक प्रकार का सक्रिय व्यापार हैं तथा सभी मनोवृत्तियाँ मानसिक कर्म हैं । प्राणी के जीवन से सम्बंधित होने के कारण अनुभूतियाँ भी सक्रिय व्यापार हैं।[31] उपर्युक्त विशेषताओं के कारण पुरुष और नारी पति-पत्नी बनकर एक दूसरे के पूरक होते हैं । किन्तु मानसिकता का यह अन्तर सन्तुलन के अभाव में द्वन्द्व का बड़ा सशक्त कारण बन जाता है । अत: पारिवारिक जीवन स्त्री- पुरुष की नैसर्गिक मानसिक भिन्नता के सन्तुलन से बहुत कुछ प्रभावित कहा जा सकता है ।

(ख) काम सम्बन्धों का यथार्थ :

पारिवारिक जीवन को प्रभावित करने में काम सम्बंधों की यथार्थता का अपना महत्वपूर्ण स्थान है, जिसके लिए नर-नारी दोनों सम भागी हैं । सभ्य समाज में काम सम्बंधों की उन्मुक्त अभिव्यक्ति पर नियंत्रण रहता है । फलस्वरूप इनका स्वरूप अत्यन्त जटिल हो गया है ।[32] प्रत्येक समाज इस मूल प्रवृत्ति के अस्तित्व को स्वीकार करता है । मनोविश्लेषणों से भी यह स्पष्ट हो चुका है कि काम प्रवृत्ति मानव में अन्य प्रेरकों की अपेक्षा अधिक व्यापक, प्रबल, जटिल तथा महत्वपूर्ण है । यह प्रेरक भी है और दूसरी ओर अनेक जटिलताओं एवं अच्छी-बुरी स्थितियों के लिए उत्तरदायी भी है ।

काम-सम्बन्ध जीवन में दो रूपों में व्याप्त रहते हैं । काम-वासना तथा कामुक भूख जिसका अन्तर जीवन की भोजन सम्बंधी मूल प्रवृत्ति के अनुरूप किया जा सकता है । जिस प्रकार जीवन की भोजन सम्बंधी मूल आवश्यकता

को भूख (Hunger) तथा इच्छा(Appetite) दो रूपों में व्यक्त किया जा सकता है, उसी प्रकार कामुक भूख तथा काम वासना में अन्तर है । कामुक भूख काम सम्बंधी न्यासर्गो(Hormones) से सम्बंधित होती है जबकि काम वासना मात्र विपरीत लिंगी चेतना, सौन्दर्य, तथा किसी भी उत्तेजक तत्व के द्वारा उत्पन्न हो सकती है ।[33] इसका निकटतम सम्बंध मानसिकता से है । विपरीत लिंगी मानवों के साथ -साथ रहने से भी काम-वासना जागृत हो जाती है । अनेक बार इसका विकृत रूप समलिंगी काम-वासना में परिवर्तित हो जाता है ।[34]

आधुनिक वातावरण में काम वासना को उत्तेजित करने के लिए कामोत्तेजक साहित्य, श्रृंगारिक-प्रसाधन, चलचित्र, भड़कीले वस्त्र, सामाजिक सम्बंध तथा तज्जन्य वातावरण और अंग प्रदर्शन का फैशन आदि सहायक कहे जा सकते हैं । अत: स्त्री- पुरुष आज सेक्स को शारीरिक आवश्यकता के रूप में स्वीकार कर रहे हैं ।इसका कारण फ्रायड,एडलर, युंग द्वारा मनुष्य के जीवन में यौन वृत्ति को आवश्यक माना है ।[35] फ्रायड इसे जीवन की मूल प्रेरक शक्ति मानते हैं उनका विचार है कि नैतिक रूप में समाज में अनेक काम-सम्बंधी वर्जनाएँ होती हैं । इस कारण जब स्वच्छन्द काम अभिव्यक्ति को मान्यता प्राप्त नहीं होती तब व्यक्ति व समाज में अन्तर्द्वन्द्व होता है । जिसके यह काम ग्रंथि जन्म से ही विकसित होती ह रहती है जिसके विकासक्रम की तीन स्थितियाँ मानव में मिलती हैं । इसकी प्रथम अवस्था को आत्म-सम्मोह कहा जा सकता है । इस अवस्था में बालक स्वयं पर आसक्त रहता है और किसी न किसी रूप में काम सन्तुष्टि करता रहता है । जब उसमें विपरीत लिंगी के प्रति कुछ समझ

जाने लगती है तब यही ग्रन्थि औडिपस(Oedipus) ग्रंथि का कार्य करती है ।[३६] जैसा पहले कहा जा स चुका है कि इसमें लड़का अपनी माता से तथा लड़की अपने पिता से प्रेम करती है । सामाजिक नैतिकता इस सम्बंध को मान्यता नहीं देती । अत: इस चेतना के जागरूक होते ही यह भावनाएँ अचेतन में जाने लगती हैं, जिससे घुटन, दमन तथा कुंठित भावनाएँ उत्पन्न होती हैं । इनके प्रकटीकरण के लिए कहीं- कहीं कला सृजन, स्वप्न, कहानी तथा कविताओं का सृजन अनायास बचपन में ही होने लगता है । तत्पश्चात् विकास के दूसरे सोपान में मात्र स्वप्नों तथा कल्पनाओं में डूब कर व्यक्ति मनोरम रति की अनुभूति प्राप्त करते हुए आगे चलकर तीसरी अवस्था में विजातीय रति तक पहुँचता है ।[३७] रति के ये तीनों सोपान काम-सम्बंधों का पथ प्रशस्त करते हैं जो व्यक्ति के सामाजिक तथा पारिवारिक जीवन को निरन्तर प्रभावित करते रहते हैं ।

यह ध्यातव्य है कि समस्त स्त्री- पुरुषों में काम प्रवृत्ति समान रूप से प्रबल नहीं होती । काम प्रवृत्ति की प्रबलता की असमानता के कारण उसकी सन्तुष्टि भी समान नहीं हो सकती । अधिक उत्तेजनात्मक तत्वों के सेवन से ग्रंथि स्राव(Hormone Secretion) अधिक होता है तथा यह काम प्रवृत्ति असाधारण रूप से प्रबल हो जाती है । अत्याधिक दमन या घुटन से शारीरिक रूप से सामान्य व्यक्ति की काम-वासना भी अत्यन्त क्षीण हो जाती है तथा कहीं- कहीं तो अधिक क्षीणता के कारण हीनता मनोग्रंथि (Inferiority Complex) उत्पन्न हो जाती है जिसके कारण अधिकांशत: व्यक्तियों में अनेक विकृतियाँ (Perversions) आ जाती हैं ।

अवचेतन मन में स्थित समस्त कुंठाएँ चेतन बँ मन में आने तथा स्वच्छन्द अभिव्यक्ति के लिए प्रयास करती रहती हैं । इन्हें रोकने के लिए फ्रायड ने एक प्रतिबंधक की कल्पना की है जो सामाजिक मान्यताओं के अनुकूल है । मनोविश्लेषकों ने इसे तर्क(Logic) नाम दिया है । इस प्रकार आंतरिक व बाह्य(अवचेतन तथा चेतन) का संघर्ष होता है जिससे विभिन्न मानसिक ग्रंथियों की सृष्टि होती है । फलस्वरूप व्यक्ति मनस्ताप(Neuroses) के शिकार बन जाते हैं ।[38] मानव में ये विकृतियाँ पशुओं की अपेक्षा कहीं अधिक होती हैं । कारण स्वयं स्पष्ट है कि मानव समाज में काम-प्रवृत्ति पर अधिक अंकुश रहता है । उपयुक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि यह मूल प्रवृत्ति परिवार को प्रभावित करने में अपना महत्वपूर्ण योग देती है, क्योंकि शारीरिक सुख या काम तृप्ति परिवार को किसी सीमा तक सुखद बनाती है तो विपरीत स्थितियों में व्यक्ति को यौन विकृतियों का शिकार बना कर विवाहेतर तथा विवाहोत्तर सम्बंध बनाने में योगदान देती है और दाम्पत्य जीवन में बिखराव आता है । परिवार में वाद-विवाद की स्थिति भी इसी कारण उत्पन्न होती है ।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि काम-सम्बंधों की यथार्थता यौन सम्बंधों की ओर व्यक्ति को ले जाती है । यह स्थिति भी पारिवारिक जीवन को बहुत बड़ी सीमा तक प्रभावित करती है, जैसा कि परवर्ती विवेचन से प्रकट है ।

(ग) यौन-सम्बंध :

इस युग में व्यक्तिगत जीवन में स्वच्छन्द यौन प्रवृत्ति को अधिक महत्व

दिया जाता है। यहाँ तक कि आधुनिकता के प्रति प्रबल उत्साह में आज का व्यक्ति सामाजिक या नैतिक बंधनों को बिना हिचक तोड़ रहा है।[३६] यह यौन प्रवृत्ति एक सीमा तक संस्कार रूप में वंशानुगत होती है। मानव में यह दो रूपों में मिलती है -

(१) शारीरिक व यौन सम्बंध
(२) मानसिक यौन सम्बंध

मानसिक यौन सम्बंध काम वासना के समतुल्य है, जिस पर ऊपर विचार किया जा चुका है। शारीरिक वासना मात्र शारीरिक सम्बंध स्थापित होने पर समाप्त हो जाती है। इनका मानसिक जगत पर अधिक प्रभाव नहीं होता। आधुनिक समाज में नैतिक बंधनों के शिथिल होने से व्यक्ति किसी से भी शारीरिक सम्बंध रखने में बुराई नहीं समझता। दूसरी ओर फ्रायड का विचार है कि यदि शारीरिक यौन सम्बंध की अभिलाषा को सन्तुष्टि नहीं मिलती तो विभिन्न मानसिक रोगों का जन्म होता है, जिसे पूर्ववर्ती विवेचन में दृष्टिगत किया जा चुका है। ऐसी यौन भावनाएँ अचेतन में जाकर उग्र रूप में रहती हैं तथा मरती नहीं और अवसर मिलने की प्रतीक्षा करती हैं। यदि उचित अवसर मिलने की संभावना नहीं होती तब बलात्कार जैसी प्रतिक्रियाएँ इसी के कारण होती हैं।[४०] यौन ग्रंथि की अधिक प्रबलता विवाह-पूर्व स्त्री-पुरुष के सम्बंध स्थापित कराने में सहायक होती हैं क्योंकि अनेक व्यक्तिगत, आर्थिक तथा सामाजिक समस्याओं के कारण आज विवाह प्रायः अधिक आयु में होता है। दूसरी ओर आधुनिक समाज में इस ग्रंथि को उत्तेजित करने वाले तत्व प्रचुरता में विद्यमान रहते हैं। फलस्वरूप किशोरावस्था आने तक ही मानव परिवेशजन्य प्रभाव

से विषयालिंगी के प्रति आकृष्ट हो जाता है तथा यौन भावनाओं की सन्तुष्टि के साधन खोजने का प्रयत्न करता है। यदि उसकी यथेष्ट सन्तुष्टि नहीं हो पाती तब वह दूसरे प्रकार के साधन तथा समलैंगिक सम्बंध भी स्थापित करता है। फ्रायड का तो यहाँ तक मत है कि कहीं- कहीं इसी ग्रंथि की अधिक प्रबलता के कारण मानव पशुओं से भी सम्बंध स्थापित कर अपनी सन्तुष्टि करता है।[४१]

प्राचीन समय से ही स्त्री- पुरुष के मध्य यौन सम्बंधों के दो मुख्य प्रयोजन 'सन्तानोत्पत्ति' तथा 'आनन्द प्राप्ति' माने जाते रहे हैं। धार्मिक नैतिकतावादी मनुष्य केवल आनन्द प्राप्ति के लिए यौन सम्बंध को भौतिकवादी कहकर हेय मानते हैं। उनका विचार है कि यह दृष्टि भारतीय संस्कृति की विरोधी है। वस्तुत: भारतीय चिन्ताधारा जो कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के पुरुषार्थ चतुष्टय के माध्यम से व्यक्त हुई है या गृहस्थाश्रम की जो परि-कल्पना की गयी है उसमें सोद्देश्यता से संलग्न किया गया है। वहाँ सत्सन्तान के लिए एक प्रकार से विवाह अथवा प्रकारान्तर से नर-नारी के सम्बंधों का विवेचन है जो उसका आदर्श पक्ष ही कहा जा सकता है। इसके विपरीत आधु-निक मनीषियों का तर्क है कि यही आधुनिक तथा वैज्ञानिक दृष्टि है।[४२] यह अत्यन्त सफल एवं महत्वपूर्ण है। इसलिए इसे अपनाने में कोई पाप या बुराई नहीं है।

मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ स्त्री- पुरुषों के यौन-सम्बंधों

को नियमित या व्यवस्थित करने का कार्य विवाह एवं परिवार संस्थाओं को सौंपा जाने लगा जिससे स्पष्ट हो गया कि व्यक्ति अपने विवाहित साथी से ही यौन-सम्बंध स्थापित कर सकता है। विवाह से पूर्व अथवा बाद में किसी अन्य से यौन-सम्बंध अनुचित माने जाने लगे। इस प्रकार नियंत्रित किये जाने पर अनेक विकृतियाँ समाज में दृष्टिगोचर होने लगीं तथा आधुनिक समाज ने इन धारणाओं को प्राचीन घोषित कर नैतिक बंधनों को शिथिल करना प्रारंभ कर दिया है। पिछले दस वर्षों में भारत की शिक्षित महिलाओं जिन्हें पश्चिमी देशों की तुलना में पिछड़ी हुई तथा रूढ़ियों से संस्कारग्रस्त माना जाता है, के विचारों में इतने क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं कि उनमें से अनेक विवाह की एकरसता तथा उससे उत्पन्न असन्तुष्टि और विरसता की चर्चा करती हैं तथा विवाह पूर्व या विवाहोत्तर उन्मुक्त यौन सम्बंधों को अनैतिक नहीं मानतीं।[४३] इंडियन एक्सप्रेस समाचार-पत्र में प्रकाशित एतद्विषयक सर्वेक्षण से पुरुषों के भी लगभग इसी दृष्टिकोण की पुष्टि होती है।[४४] इस प्रकार की विचारधारा को पश्चिम सभ्यता का दुष्परिणाम कहा जा सकता है। परन्तु यदि हम गंभीरता से विचार करें तो विदित होता है कि प्राचीन भारतीय कथाओं में अनेक महापुरुषों ने एक से अधिक नारियों के साथ यौन-सम्बंध रखकर भी अपनी महानता बनाये रखी। उदाहरणार्थ महाभारत में कुन्ती का चरित्र यह स्पष्ट करता है कि प्राचीन काल में विवाह पूर्व या विवाहोत्तर उन्मुक्त काम-सम्बंध हेय दृष्टि से नहीं देखे जाते थे। द्रौपदी के चरित्र से स्पष्ट होता है कि नारी एक समय में एक से अधिक पुरुषों से प्रेम तथा यौन-सम्बंध रख सकती थी। इस प्रकार के उदाहरणों को देखते हुए आज कुछ लोग अब यौन-शुचिता के सिद्धान्त को अस्वीकार करते हैं। उनका विचार है कि विवाह संस्था अब पूर्णतः समाप्त हो जानी चाहिए।[४५]

अनेक विशिष्ट क्षेत्रों के व्यक्तियों जैसे नेताओं, अभिनेताओं, साहित्यकारों एवं कलाकारों के लिए अधिक व्यक्तियों से सम्बंध रखना उनके हित में माना जाता है । उन्हें इस प्रकार अपने कार्य की प्रेरणा अधिक प्राप्त होती है । इस सम्बंध में राजेन्द्र यादव का यह कथन विचारणीय है- 'वास्तव में इससे बड़ा अत्याचार और क्या होगा कि आठों पहर भावनाओं के सागर में डूब कर कला के मोती लाने वाले से माँग की जाय कि वह कमल के पत्ते की तरह निर्लिप्त रहे । नारी शरीर के सौन्दर्य को मूर्ति और चित्र द्वारा प्रस्तुत करने वाले, नारी के हृदय की मधुरतम भावनाओं में डूब कर साहित्य-रचना करने वाले से माँग की जाय कि नारी शरीर देखना ही तुम्हारी अनैतिकता है ।[४६]

नैतिकता और आदर्श को मानने वाला प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि उसका आदर्श मात्र ओढ़ा हुआ आदर्शात्मक आचरण है । आज नैतिकता का अर्थ संकीर्ण और संकुचित होकर केवल यौन उच्छृंखलता का पर्याय बनता जा रहा है । आज प्राय: यह दिखायी देता है कि पुरुष दूसरे की बहन, बेटी, अथवा पत्नी से नि:संकोच वार्तालाप करने तथा प्रेम-वासना आदि के प्रसंगों की चर्चा से आनंदित होते हैं । उनके दु:ख-दर्द को अपना समझते हैं। दूसरी ओर वैसी ही घटनाओं को अपने पारिवारिक जीवन में अभिव्यक्ति की कल्पनाओं को अनैतिक भी मानते हैं। अपनी पत्नी, बहन तथा पुत्री को दीवारों में कैद रखना ही धार्मिक कर्तव्य मानते हैं । आज के समय में आनन्दानुभूति को नैतिकता की दृष्टि से हेय न मानकर शारीरिक नियन्त्रण इतना अवश्य होना चाहिए कि सन्तान का जन्म केवल विवाहित स्त्री- पुरुष द्वारा ही संभव हो । कारण कि विवाहित दंपत्ति अधिक काल तक सामाजिक स्वीकृति के साथ एक दूसरे का साथ निभा सकते हैं ।

तथा सन्तान के प्रति कर्तव्य एवं दायित्वों को पूर्ण रूप से निभा सकेंगे । दूसरी ओर कानूनी विधानों के अनुसार भी विवाह से बाहर की सन्तान को अमान्य घोषित किया जाता है । उन्हें समान अधिकार नहीं मिलते तथा समाज में निकृष्ट माना जाता है । इसी भय के कारण स्त्री- पुरुष विवाह से पूर्व या विवाहोत्तर अन्य सम्बंध अधिक नहीं रखते और यदि रखते भी हैं तो वे सम्बंध गुप्त एवं अत्यन्त सावधानीपूर्वक होते हैं । प्राचीन काल में भी लगभग यही स्थिति थी ।

आधुनिक काल में सन्तति-नियमन के उपायों तथा गर्भ निरोधकों के आविष्कार से व्यक्तियों के दृष्टिकोण नितान्त परिवर्तित हो चुके हैं । भारत सरकार ने भी जनसंख्या को नियंत्रित करने के उद्देश्य से परिवार-नियोजन को एक राष्ट्रीय कार्यक्रम के रूप में स्वीकार किया है। उसका खुला प्रसारण रेडियो, समाचार-पत्रों तथा पोस्टरों के माध्यम से होता है । नये कानूनों द्वारा विशेष परिस्थितियों में गर्भपात भी अवैध नहीं है । अत: यह आरोप निराधार नहीं कहा जा सकता कि हमारे नैतिक आचरणों के परंपरागत मानदंड प्राय: ध्वस्त होते जा रहे हैं, जिसके परिणाम स्वरूप बड़े नगरों में शिक्षित वर्ग के अविवाहित प्रेमी अब मात्र अशरीरी प्रेम में विश्वास नहीं करते अपितु समय व अवसरानुकूल शारीरिक सम्बंध स्थापित कर लेने में भी कोई बुराई नहीं समझते । बड़े-बड़े नगरों में रहने और पढने वाली अनेक लड़कियाँ व स्त्रियाँ भी विवाह पूर्व या विवाहोत्तर यौन-सम्बंधों को बुरा नहीं समझती ।[४७] दूसरे शब्दों में यह एक प्रकार से यौन-सम्बंधों का आधुनिक यथार्थ बोध ही है, जिस पर स्वतंत्र रूप से विचार कर लेना अ यहाँ आवश्यक है ।

(घ) आधुनिक यथार्थ बोध :

यदि गंभीरता से विचार किया जाय तो प्रतीत होता है कि आधुनिक जीवन बोध, युग की मानसिकता के साथ-साथ परिवर्तित होता रहता है। प्रत्येक युग के अपने नैतिक आचरण होते हैं अपने से पहले युग की नैतिकता सदा से रूढ़िग्रस्त व अमान्य होती आयी है। आज के नये मौतिक आचरण तथा मान्यताएँ भी सदा रहने वाली नैतिकता नहीं है और आनेवाली पीढ़ी इसे अवश्य ही अमान्य घोषित कर देगी। इस प्रकार नैतिकता सदैव गत्यात्मक रहती है। नवीन परिस्थितियों और युग-चेतना के सन्दर्भ में अपने को ढालना ही आधुनिकता है।[४८] जब हम आधुनिकता के विकसित रूप का विश्लेषण करते हैं तब ज्ञात होता है कि यह वह मानसिक स्थिति है जो हमें मूल्यों को नये सन्दर्भों में देखने की दृष्टि देती है।[४९] अत: यह दृष्टि मात्र बाह्य उपकरणों तक सीमित न रहकर आंतरिक गतिशील अनुभूतियों से सम्बंधित होती है जिसका प्रभाव मूल चेतना पर पड़ता है, जो नये सन्दर्भों को उल्लिखित करती रहती है। इस प्रक्रिया में नवीन के प्रति सहज आकर्षण होता है अत: नवीन अपनी गतिशीलता में परंपराप्रवाह को स्वीकारता हुआ अग्रसर होता है जबकि आधुनिक दृष्टि अपनी युग चेतना को परंपरा से परिवर्तित रूप में ग्रहण करती है। यही आज का आधुनिक यथार्थ बोध है। यथार्थ का अर्थ है जो जैसा है उसे उसी रूप में स्वीकार करना। जीवन के विभिन्न क्षेत्र राजनीति, दर्शन, धर्म आदि में इसके सूक्ष्म रूप को स्वीकृति मिली है। सच्चे यथार्थवादी मूल्य की यह विशेषता है कि उसमें किसी भय या पक्षपात रहित ईमानदारी के साथ जैसा है उसी रूप में ग्रहण किया जाता है।[५०] इस प्रकार यथार्थवादी दृष्टि सामाजिक पीड़ाओं, घुटन तथा वर्जनाओं को उत्साह के साथ खोजती हैं और आरोपित बाधाओं से मुक्त होकर प्रत्यक्ष रूप में जीवन का दर्शन करती हैं। समाजवादी यथार्थवाद में वास्तविकता के साथ-साथ

सामाजिक संघर्षों का भी चित्रण होता है । अत: उपर्युक्त विवेचन में मनोविज्ञान के उन पक्षों पर विचार किया है जो दाम्पत्य जीवन की सीमा में आते हैं , किन्तु इनके अतिरिक्त पारिवारिक जीवन के सम्बंधों में भी यहाँ विचार कर लेना प्रासंगिक है ।

३. इतर पारिवारिक सम्बंध :

पूर्ववर्ती पृष्ठों के विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि परिवार को प्रभावित करने में यौन सम्बंधों का महत्वपूर्ण योगदान है, जिसको विवाह द्वारा नियंत्रित किया जाता है । परन्तु इनके साथ-साथ परिवार को प्रभावित करने में इतर पारिवारिक सम्बंधों का भी योगदान रहता है जिन पर यहाँ विचार कर लेना आवश्यक है । विवाह के परिणामस्वरूप परिवारों में मातृत्व तथा पितृत्व की स्थापना होती है । इस अवस्था में पति-पत्नी के सम्बंधों के विषय में दो तथ्य लक्ष्य किये जा सकते हैं । एक- सन्तान के प्रति दो में से किसी एक का और विशेष कर पत्नी का विशेष लगाव, तथा दूसरे दोनों के परस्पर के प्रति रूचियों का सातत्य, जिसका स्वाभाविक परिणाम सन्तानों का उपेक्षित हो जाना होता है ।

जहाँ नारी मातृत्व- बोध के कारण सन्तान में अधिक रुचि लेने लगती है वहाँ पुरुष स्वयं को उपेक्षित अनुभव करता है । इस उपेक्षा अनुभव के दो स्वाभाविक परिणाम होते हैं- एक में असन्तोष, अन्तर्द्वन्द्व या विवाद की ओर उनके पारस्परिक सम्बंध मुड़ जाते हैं । द्वितीयत:- उनकी रुचि अपेक्षाकृत आपस में कम होने लगती है और वे तीसरे व्यक्ति की खोज करने व उसमें रुचि

लेने लगते हैं । इस प्रकार तीसरे व्यक्ति की परिकल्पना किसी सीमा तक पारिवारिक जीवन में द्वन्द्व उपस्थित कराने में सहायक होती है । स्वभावत: उपर्युक्त दोनों ही स्थितियों में पारिवारिक जीवन में स्वभावत: विकृति का समावेश होता है । सन्तुलन एवं सामंजस्य के प्रति सचेष्टता इन द्वन्द्वों को नियंत्रित कर पाती है । अन्यथा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में ऐसे द्वन्द्व भले ही एक सीमित समय के लिए क्यों न हो, उनका अस्तित्व स्वयं सिद्ध या अनिवार्य है ।

दूसरी और जिन परिवारों में माता-पिता तथा अन्य व्यक्ति भी होते हैं, वहाँ भी पति-पत्नी के सम्बंध अपेक्षाकृत कम उन्मुक्त होते हैं । एक ओर माता-पिता पुत्र से अपेक्षाएँ रखते हैं तो दूसरी ओर पत्नी स्वतंत्र रूप से रहना चाहती है । अत: इन परिस्थितियों में दो वृद्ध जन उपेक्षित होंगे ही । परिणामत: परिवार में विघटन की स्थिति आना स्वाभाविक है । इन सम्बन्धों में द्वन्द्व की विविध स्थितियाँ स्वभावत: देखी जाती हैं । द्वन्द्व का स्वरूप विशेष कर इस मनोवैज्ञानिक स्थिति पर अधिक निर्भर करता है कि पति या पत्नी या दोनों कितने व्यक्तिवादी हैं अथवा किस सीमा तक वे सामूहिक व्यवस्था के प्रति समर्पित हैं ।

निष्कर्ष :

पारिवारिक जीवन को संचालित तथा प्रभावित करने वाले विविध पक्षों का जो विवेचन प्रस्तुत परिच्छेद में किया गया है, उसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि ये प्रधानतया दो प्रकार के हैं - एक तो मनोवैज्ञानिक तथा दूसरे- सामाजिक । विवाह संस्था, पति-पत्नी के सम्बंध, सन्तान, परस्पर सहयोग तथा

द्वन्द्व आदि सामाजिक परिवेश की देन ही नहीं हैं अपितु सामाजिक जीवन के घटक के रूप में परिवार के गठन एवं विघटन के उत्तरदायी हैं । इनसे उत्पन्न द्वन्द्व मानव मनोविज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश कर जाते हैं । नर-नारी के सम्बंधों के अनेक विध मनोवैज्ञानिक आधार, यौनाकर्षण, चेतन और अचेतन में स्थित आशा-आकांक्षाएँ, तज्जन्य कुंठाएँ, नर-नारी के स्वतंत्र मनोविज्ञान, काम सम्बंधों का यथार्थ, यौन-सम्बंधों के अनेक रूप आदि ऐसे मनोवैज्ञानिक पक्ष हैं जो पारिवारिक जीवन को प्रभावित करने अथवा उसके निर्मित होने में सहायक होते हैं । इन द्विविध पक्षों के प्रभावों को व्यक्ति या परिवार के जीवन से अलग नहीं किया जा सकता । हाँ, इतना अवश्य है कि व्यक्ति या समुदाय के निजी संस्कारों के अनुसार कोई एक पक्ष प्रभावित करने की दृष्टि से अधिक सशक्त दिखायी पड़ता है ।

फ्रॉयड के एतद्विषयक विवेचन की चर्चा करते समय यह लक्ष्य किया जा चुका है कि मनोवैज्ञानिकों ने मानसिक स्थितियों का सम्बंध साहित्य-सर्जन से जोड़ा है । विशेषकर युंग का विचार है कि प्रत्येक सफल साहित्यकार किसी न किसी कुंठा से ग्रस्त रहा है । हमारा अनुशीलन साठोत्तर हिन्दी कहानी में पारिवारिक जीवन के आयामों से सम्बद्ध है । अतः उसे प्रभावित करने वाले पूर्व निर्दिष्ट पक्ष हमारे अध्ययन को किसी न किसी रूप में दिशा प्रदान कर सकते हैं । इस विषय पर परवर्ती अध्यायों में प्रसंगानुसार विचार अवश्य होगा किन्तु साठोत्तरी हिन्दी कहानियों में उक्त आयामों के अनुसंधान के लिए यहाँ यह आवश्यक है कि हम उसके कुछ पूर्व की सामाजिक वस्तु स्थिति पर सम्यक्

विचार करें । इसका मुख्य कारण है कि आधुनिक भारतीय जीवन में विविध राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक कारणों के परिणाम स्वरूप पारिवारिक जीवन मूल्यों में परिवर्तन और विकास के अनेक सोपान आ चुके हैं। अत: इन सोपानों की भूमिका में आलोच्यकालीन जीवन तथा कहानी साहित्य में उसका आकलन भलीभाँति किया जा सकता है, जैसा कि परवर्ती अध्याय के विवेचन से प्रकट है ।

--

<u>सन्दर्भ संकेत :</u>

१- डॉ० मदनगोपाल गुप्त- मध्यकालीन हिन्दी काव्य में भारतीय संस्कृति-पृष्ठ-

२- Western March- The History of Human Marriage-Vol.I Page-26

३- रवीन्द्रनाथ मुकर्जी- हिन्दू विवाह एक संस्कारात्मक विवाह-भारतीय समाज व संस्कृति-पृष्ठ-३३१ संस्करण-१६७६ ।

४- मनु-स्मृति :- स्मृति-सन्दर्भ, श्रीमन्महर्षि प्रणीत-धर्मशास्त्र संग्रह : मन्वा दिदश स्मृत्यात्मक: प्रथमो भाग: पृष्ठ-३६-३७,शीर्षक-विवाह कर्णविर्णनम् संस्करण-१६५२

5. Hindu Society now recognizes only two forms the Brahma and the Asura, the higher castes preferring the former, the backward castes the latter, though ~~xxx~~ here and there among the higher castes the Asura practice has not died out'- D.N.Majumdar, Races and cultures of India, Asia publishing House, Bombay-1958, Page-173.

6. 'Social Psychology is the science of the behaviour of the individual in society- Krech and Crutchfield, Theory and problems of social psychology, Page-7

7. 'Social psychology is the study of persons in their interactions with one another and with reference to the effects of this inter play upon the individual's thoughts, feelings, emotions and habits'-Young K.Handbook of social Psychology-Page-1(1951)

8. 'Behaviour is the best understood when we view it in terms of a dynamic or constantly changing relationship of the individual to his environment'-Young.K-Personality and problems of Adjustment'-Page-43.

9. Psychology to day concerns itself with the scientfic investigation of behaviour including from the standpoint of behaviour much of what earliar psychologists dealt with as experience-N.L.Munn,'Psychology fundamentals of Human adjustment-Page-23.

10. 'Psychology is the science of the activities of the individual in relation to his environment-'Wood-Worth-R.S. Psychology-Page-20.

11. डॉ० देवराज उपाध्याय- आधुनिक कथा साहित्य और मनोविज्ञान-पृष्ठ-५

12. Claire rayner-Baby and young child care-Page-150.

13. Sigmund Freud-Translated by W.J.H.Sprott,New Introductory lectures on psycho-analysis,Chapt.
The psychology of women-Page-152.

14. Ibid,(Fourth Impression-1949) Page-166.

15. Ibid,Page-160-161

16. S.Freud-Civilization and its discontents(1930)

17. Paul thomas young-Motivation of Behavior-Title-The problem of Nervous and mental energy-Page-66-67
And
Herand A.Katchadourian-'Foundamentals of Human Sexuality'-Chapt. Psycho-sexual development, Libido-Theory-Page-190(1972)

18. As a force of variable quantity by which processes and transformations in the spheres of sexual excitement can be measured,-S.Freud-'The three contributions to the theory of sex'- Translated by Dr.A.A.Brill.Chapt. The Transformation of puberty, The libido theory,page-611,(1938)

19. Encyclopaedia of Humanities.Psychology, सं. डॉ०- नगेन्द्र, प्रथम संस्करण 1968, Page-162,

20. Paul thomas young-Motivation of behaviour'-Title-Substitute activities: Result of thwarting of sexual drive-Page-504 (1950)

21. Ibid-Page-504(1950)

22. डॉ० रामनाथ शर्मा- समाज मनोविज्ञान-शीर्षक-समाज मनोविज्ञान में समकालीन सिद्धान्त- पृष्ठ-६६

23. Vatsyayana's Kama sutra(Complete translation from Original Sanskrit by S.C.Upadhyaya)Title-The different types of woman,Fit and unfit to consort with,and about massengers of love-Page-88.

24. Sigmund Freud-'Introductory lectures on psycho-Analysis-' Translated by Joan Rivieve,Title-'Development of the libido x and sexual organization-' Page 275(1949)

25. Karn Horney-Feminine psychology, Page-37,Routledge and Kegan Paul Ltd.London-1967.

26. Ann Oakley-Sex,Gender and society. Page-77.

27. Karen Horney-'Feminine psychology',Page-52.

28. Havelock Ellis,-Being whipped,Experiencing Cructly Psychology of sex,-page-133.

29. Karen Horney-'Feminine psychology,page 216-217.

30. The subtle chemical influence of sex harmones is what makes the brain and the thoughts of a woman profoundly different from those a man'-David Reuben-'Any woman Can'-
Page-71.

31. डॉ० यदुनाथ सिन्हा, मनोविज्ञान-हिन्दी संस्करण-पृष्ठ-६

32. Vatsyayana's Kama Sutra-Translated by S.C.Upadhyaya-
Page-25.

33. डॉ० रामनाथ शर्मा-'समाज मनोविज्ञान'- शीर्षक- मानवीय प्रेरणा और मूल प्रवृत्तियाँ- पृष्ठ-१३४

34. Sigmund Freud-The Basic writing of sigmund Freud'- Translated by-Dr.A.A.Brill,Page-554-556.Title-'The Sexual Abrerrations'.

35. विमल सहस्त्र बुद्धे- हिन्दी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण- पृष्ठ-२१६

36. Sigmund Freud-'Introductory lectures on psycho-Analysis', Title-'The neuroses Sexual organizations,the oedipus Complex'-Page-276-277.

37. Herant A.Katcha dourian-'Fundamentals of Human sexuality'- Chapt. 'Psycho-sexual development : Maternal love'- Page-201(1972)

38. S.Freud-The Basic writings of sigmund Freud,Chapt. Three contributions to the theory of Sex',Translated by A.A.Brill,sub chapt.'The sexual Aberrations'-Page-575 (1938)

39. डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय-द्वितीय महायुद्धोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास- पृष्ठ-७८

40. Herant A.Ket chodourian-Fundamentals of Human Sexuality. Chapt. 'Variations and deviations in sexual behaviour; Sadomachism and Rape-Page 291-295.

41. S.Freud-'The Basic writing of sigmund Freud-Translated by Dr.A.A.Brill,Chapt. 'Three contributions to the theory of sex.'Sub Chapt. • 'The sexual Aberrations .Page.565.

42. 'Sex for human beings has two major functions.One is Reproduction and the other is pleasure.Sex as a biological necessity for preserving the species has always been vpheld by all at all times and in all places as highly desirable. But its persuit for the gratification of senses alone has been a subject of social and ethical controversy'- Dr.Promilla Kapoor,'Love-marriage and sex'-Page 162.

43. Ibid-Page-264

44. Sherehite-'A new look at male sexuality'-Indian Express, Sunday magazine-24th Jan'82 -Page-4

45. सुशील गुप्ता(आयोजिका) क्या विवाह संस्था समाप्त कर देनी चाहिए ? (परिचर्चा)धर्मयुग-२२ अप्रैल-१९७३,पृष्ठ-२८-२९

46. श्री राजेन्द्र यादव,`कलाकार और यौनाचार`,कहानी स्वरूप और संवेदना-पृष्ठ-२१७

47. 'Another change that was observed after 10 years was the introduction of course by a small minority of the bold ideas that'sexual freedom of indulging in every type of physical intimacy short of sexual inter-course should be

allowed out side marriage'- A married woman should be allowed to indulge in sex out side marriage with only one another man provided he in her sincere lover and receprocates her love and respect'and that a married woman should be allowed to indulge in extramarital sex with more than one man,if she so desires and considers to be alright'- Dr.Promilla Kapoor-Love,Marriage and sex'-Page-218.

48. डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी-`नवलेखन-पृष्ठ-१३

49. लक्ष्मीकान्त वर्मा- नये प्रतिमान : पुराने निकष,पृ० ३८

50. Jorg lucus-'Study in Europian Realism-Page-137-138.